International Journal in Commerce, IT and Social Sciences
Volume 10 Issue 03, March 2023 ISSN: 2394-5702 Impact Factor: 6.617
Journal Homepage: http://ijmr.net.in, Email: irjmss@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal

प्राचीन भारतीय सैन्य व्यवस्था में रथ एवं सारथी का महत्व

डॉ० सुरेन्द्र सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर इतिहास
मथुरा प्रसाद महाविद्यालय कोंच (जालौन) उत्तर प्रदेश
ईमेल ss.poniya@gmail.com

भारतीय युद्धकला में युद्ध भूमि में रथों का प्रयोग महत्वपूर्ण माना जाता था। हड़प्पा व लोथल के उत्खन्न में रथों के साक्ष्य मिले हैं। अधिकतर पैदल सैनिकों का ही प्रयोग भारतीय संस्कृति के विकास के प्रारम्भिक चरणों में युद्ध के लिए होता था। कालातर में आर्यों को लंबी सैनिक यात्राएं अपने राज्य विस्तार के लिए करनी होती थी, जिसमें अधिक समय लगता था और रास्ते में ही सैनिक थक जाते थे। अतः युद्धभूमि में तीव्रगति वाले साधनों का प्रयोग आवश्यक हो गया। रथों का विकास इसी उद्देश्य को पूरा करने के लिए हुआ। इसके साथ ही पैदल सैनिक की अपेक्षा रथ में सवार सैनिक अधिक सुरक्षित रहता था। रथ की महत्ता का उल्लेख हापकिंस ने किया है कि रथ पर सवार सैनिक योद्धा एक सेना के समान समझा जाता था।

रथ संरचना एवं उसके अंग

वैदिक साहित्य और परवर्ती साहित्य से वैदिक आर्यों तथा कालांतर के रथों की संरचना, रथ के विभिन्न अगों के नाम तथा युद्ध में इनकी उपयोगित्ता आदि विषयों का उल्लेख मिलता है। परवर्ती साहित्य में इन रथ अगों का वर्णन थोडी सी विभिन्नता के साथ मिलता है। रथ के अंगों में चक्र सबसे मुख्य था जिसे रथ-चक्र कहा जाता था। महाभाष्य में पतंजलि ने रथ के अन्य अंगों के विषय में बताया है कि युग (जुआ). नभ्य, अर, अक्ष उंपधि आदि। नाभि पहिए की बीच की गोलाकार लकड़ी को कहते थे तथा नभ्य पहिए के बाह्य गोलाकार काष्ठों को अर नाभि और नभ्य को जोड़ने वाले अंग को कहा जाता था। शिल्प-कला पर अंकित रथों में इन रथ के अंगों अथवा अपस्कारों का अंकन भरहूत, सांची एवं बोधगया के स्तूपों पर परिलक्षित होता है।(1) भरहुत एवं सांची स्तूपों पर उत्कीर्ण दृश्यों में रथों के ऊपर किसी भी प्रकार का छाजन नहीं दिखाई देता और न ही बैठने के लिए जगह दिखाई देती है।

वैदिक काल से मौर्यकाल तक रथों की निर्माण विधि में उत्तरोत्तर विकास हुआ। रथों को छः वर्गों में अर्थशास्त्र में कौटिल्य विभक्त किया गया। उत्सव आदि के लिए देवरथ, विवाह आदि कार्यों के लिए पुष्परथ, युद्ध आदि के लिए सांग्रामिक, सामान्य यात्रा के लिए पारिपाणिक, शत्रु के दुर्ग को गिराने के लिए परपुराभियानिक व घोड़ों आदि को गिराने के लिए वैनामिक। यह वर्गीकरण सवारी एव युद्ध में प्रयुक्त होते के आधार पर किया गया है। रथों के विभिन्न प्रकारों का वर्णन जैन साहित्य में भी किया गया है, जैसे संग्राम रथ, यान रथ, कर्णीरथ, अग्नि भीरूथ आदि।(2)

प्राचीन भारत के विभिन्न ग्रन्थों में, इन रथों में, किन-किन में और कितनी कितनी संख्या में पशुओं को जोता जाता था, इसका भी उल्लेख हुआ है। वैदिक रथ में सामान्यतया दो घोड़े जोते जाते थे। ऋग्वेद के अनुसार कभी-कभी तीन या चार घोड़े जोते जाते थे। सारथी जिन्हें लगाम एवं चाबुक से वश में रखता था। वैदिक काल में अश्व के अतिरिक्त गंर्दभ और अश्वतरी (खच्चर) भी जोत दिए जाते थे, जो अश्व से निम्न कोटि के थे। रथ में कड़वाओं को जोतना अधिक महत्वपूर्ण समझा जाता था क्योंकि वे तेज व ठडे स्वभाव की होती थी। महाकाव्य काल में रथों में अधिकतर अश्वों के जुते होने का उल्लेख है किन्तु कहीं-कहीं गर्दभों और अश्वतरी के जुते होने का वर्णन भी मिलता है। रथ में जुतने वाले पशुओं में अश्व उष्ट्र और गर्दभ के नामों का उल्लेख पतंजलि के महाभाष्य में किया गया है और इन स्थों को क्रमशः अश्व, औष्ट्र और गार्दव रथ कहा गया है। रथों में घोड़े जोते जाने का कालिदास के ग्रंथों में उल्लेख हुआ है। रथों में दो से चार घोड़े जुते हुए होते थे। ऐसा मुद्रा(3) लेख एवं शिल्प अंकन(4) में दृष्टिगत होता है।

रथ सेना का युद्ध भूमि में वैदिक काल में पर्याप्त योगदान रहा। ऋग्वेद व अथर्ववेद में एक मंत्र युद्ध स्थ के सम्मान में मिलता है। रथ सेना के प्रयोग का उल्लेख महाकाव्यों में अनेक स्थलों पर भी हैं। जैन साहित्य से ज्ञात होता है कि सैन्य संगठन में रथ सेना का तीसरा स्थान था। रथ के विषय में इस काल का उल्लेख मिलता है कि यह हिमालय में उत्पन्न होने वाले सुन्दर तिनिस काष्ठ द्वारा निर्मित होता था और इस पर सोने की चित्रकारी बनी रहती थी। चक्के और घुरे मजबूत होते थे तथा चक्कों का घेरा मजबूत लौह का बना होता था। शक्तिशाली और सुन्दर घोडे रथ में जोते जाते थे तथा रथ को एक कुशल सारथी हांकता था। छत्र ध्वज, पताका, घंटे, तोरण तथा नंदिघोष आदि से रथ को सजाया जाता था।(5) युद्ध एवं साधन में प्रयुक्त होने वाले दो प्रकार के रथों का उल्लेख भगवती सूत्र में किया गया है।(6) विभिन्न प्रकार के कार्यों में युद्ध रथों का प्रयोग किया जाता था, उदाहरणार्थ भोजन, सुरक्षात्मक एवं आक्रमणात्मक अस्त्र-शस्त्रों को ढोने के लिए।

सिकन्दर के आक्रमण के समय रथ सेना का महत्व अपेक्षाकृत कम हो गया था। यद्यपि रथ सेना का प्रयोग इस काल में भी होता था। विवरणों से ऐसा ज्ञात होता है कि रथ सेना को विशेष स्थान नहीं प्राप्त था। उदाहरणार्थ-पोरस सिकन्दर के साथ युद्ध करने के लिए हाथी पर सवार होकर युद्धभूमि में आया था, रथ पर नहीं। सिकन्दर की सेना का प्रतिरोध करने के लिए पोरस ने अपने पुत्र के नेतृत्व में जो सेना भेजी थी, उसमें सेना का एक अंग रथ-सेना का भी था। जबकि वर्षा होने के कारण यह सेना असफल हुई थी। अपने भारी वजन के कारण रथों के पहिए जमीन में घसने लगे थे। रथ प्रयोग इन सबके बावजूद सुरक्षात्मक अस्त्र के रूप में किया गया। युद्ध में पोरस की योजना थी कि रथों के द्वारा विरोधी सैनिकों को कुचल दिया जाए। इसके लिए पोरस ने प्रयास भी किए परन्तु रथों पर सवार योद्धा अपने स्थान से नीचे गिरने लगे। पोरस ने जब एक ऐसा स्थान देखा

जहाँ दलदली मिट्टी नहीं है और वह दलदली भूमि घुड़सवार सैनिकों के लिए उपयुक्त है, यहाँ घुडसवारों को युद्ध लिए आदेश दिया और रथों को अश्व सेना के दोनों किनारों पर नियुक्त कर दिया।(7) एरियन का कहना है कि युनानियों ने भारतीय सेना को भ्रम में डाल दिया। रथों के हांकने वाले सारथी मार दिए गए और रथों को दो भागों में विभक्त कर दिया। डियोडोरस के मतानुसार यूनानियों की अश्व सेना ने भारतीय सेना का ध्वस्त कर दिया।(8) यूनानियों की सेना का सफलता के सन्दर्भ में कहा जा सकता है कि अरबेला की लड़ाई में यूनानी अश्व सेना ने पर्सियन रथ सेना को नष्ट कर इस कार्य का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त लिया था जिससे यूनानी सेनाओ के मध्य अच्छा उत्साह एवं मनोबल ऊचा था। उनके नेतृत्वकर्ता सिकन्दर ने विश्व विजय की कामना से अपना देश छोडा था। उसकी प्रबल इच्छा को यूनानी सेनाओ ने बहुत ही सही ढंग से सार्थक किया था।

यह कहना कि रथ सेना का महत्व कम हो गया था. अनुचित है। सेना के विभिन्न अंगों का युद्ध कला में अपना अलग ही महत्व होता है। रथ सेना ने गौर्यकाल में अपना महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया था। सेना के अंगों का सही प्रयोग नेतृत्वकर्ता व परिस्थितियों पर भी निर्भर करता है। यूनानियों के विषय में जानकारी बहुत ही सीमित है। इतिहासकारों को उन्हीं के स्रोतों पर विश्वास करना पड़ता है। मौर्यों द्वारा सुदूर दक्षिण में विजय प्राप्त करने के लिए युद्ध-रथ से युक्त सैन्य अभियान का उल्लेख तमिल साहित्य में मिलता है। तमिल साहित्य में मौर्यों के युद्ध रथ को काफी विशाल बताया गया है। मौर्यों ने युद्ध रथों के आवागमन के लिए पहाड़ियों को काटकर मार्ग बनाया था।(9) मौर्य काल के बाद छठी शताब्दी ई० तक रथ सेना का प्रयोग रणक्षेत्र में होता रहा। चूंकि रथ-सेना चतुरंगिणी सेना का एक अग थी। इसलिए रथ सेना की उपेक्षा करना शासकों एवं नेतृत्वकर्ताओं के लिए न्याय संगत नहीं था।

लेकिन इसके पश्चात विदेशी एवं सामन्तवादी प्रभाव के कारण रथ सेना का प्रभाव कम होने लगा। इसके बावजूद भी अभिलेखों, मुद्राओं, चित्रकला, एवं प्राचीन शिल्प कला के अकनों में प्राप्त रथों के विवरण से ज्ञात होता है कि मौर्यकाल के बाद भी सेना में रथ सेना को बराबर स्थान प्रदान किया जाता था। रुद्रदामन के जूनागढ़ शिल्प लेख में सम्राट को रथ चलाने में निपुण कहा गया है। हाथी गुम्फा अभिलेख के अनुसार खारवेल ने रथयुक्त चतुरंगिनी सेना पश्चिमी दिशा में अपने शासन काल के द्वितीय वर्ष में, शातकर्णी की उपेक्षा कर सेना भेजी थी। रथ सेना का प्रयोग कुषाण काल में भी होता था इसकी प्रमाणिकता की पुष्टि सिक्कों से होती है, उदाहरणार्थ कुषाण कालीन स्वर्ण मुद्रा के पृष्ठभाग पर राजा विमकदाफिस को एक रथ (विग्गा) पर आसीन अकित किया गया है. जो गदा लिए हुए है।(10)

रथ सेना का उल्लेख गुप्तकाल में अपेक्षाकृत कम मिला है। प्रायः पैदल गज तथा अश्व सेना का ही वर्णन इस काल के अभिलेखों में हुआ है। भूमि की अनुकूलता न देखकर तथा गति की बाधा

समझ कर गुप्त काल में रथ सेना को अधिक महत्व नहीं दिया गया। गुप्त काल में रथों का उल्लेख अवश्य अभिलेखों में हुआ है,(11) लेकिन विदेश एवं सामन्ती प्रभाव के कारण गुप्त सेना का पुनर्गठन किया था। उस आधार पर उनकी सेना में अश्व सेना का महत्व अधिक था, क्योंकि यह तत्कालीन परिस्थिति के लिए ज्यादा उपयुक्त थी। विश्व में उस समय सेना में घुड़सवारों का व्यापक उपयोग होता था तथा परम्परागत रथ सेना का महत्व कम हो गया जिसने महाकाव्य काल तथा मौर्यकाल में रणक्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।(12) हर्ष ने चालुक्यों के विरुद्ध रथ सेना का प्रयोग नहीं किया था। ऐसा उल्लेख बाणभट्ट ने भी हर्षचरित में किया है। लेकिन इन सबके बावजूद चतुरंगिणी सेना में रथ सेना का स्थान बना रहा।(13)

रथों का स्पष्ट अंकन प्राचीन शिल्प कला में मिलता है। रथ पर आरुढ कौशल के राजा प्रसेनजित का अंकन भरहुत स्तूप की तोरण वेदिका पर बुद्ध की वंदना करते हुए हुआ है। राजा प्रसेनजित का रथ दो पहियों वाला है, ऊंचा व अलंकृत भाग रथ के सामने वाला है व नीचे इसके पार्शव है। चार आदमी इस रथ में बैठे हुए है। मध्य में राजा खड़ा है और बायीं तरफ सारथी है। एक व्यक्ति बाई ओर चंवर हिलाने वाला तथा एक व्यक्ति छत्र पकड़ने वाला उसके पीछे है। चार घोडों द्वारा खीचते हुए इस रथ को दिखाया गया है। कलंगी घोड़ों के सिरों पर बंधी हुई हैं। उनके कडे हुए लम्बे बाल है एवं लम्बी लम्बी पूछें उनकी एक ओर इस ढंग से बांधी गई है कि वे रथ चलाने वाले के मुँह को छू न सकें। साँची स्तूप के दक्षिणी तोरण द्वार के अग्रभाग पर सम्राट अशोक रथ पर आरुढ़ होकर रामग्राम के स्तूप के दर्शन के लिए आते हुए अकित है। रथ पर आसीन सम्राट अशोक को इसी स्तूप के बाएं स्तम्भ के अग्रभाग में भी अपने पार्श्वचरों के साथ अंकित किया गया है।(14) कई स्थानों पर बुद्ध के अस्थि अवशेष को प्राप्त करने के लिए मल्लों के विरुद्ध सात राजाओ द्वारा रथ सेना के साथ आक्रमण के दृश्य का अंकन सांची स्तूप में हुआ है। चार घोड़ों वाले रथ पर आसीन सूर्य को ऊषा तथा प्रत्यूषा के साथ बोध गया में दिखाया गया है। प्रथम शताब्दी ई. पू में सूर्य चार घोड़ों वाले रथ पर आसीन बिहार के हे मुख्य मंडप (भाजा) के पूर्वी छोर के प्रवेश द्वार के बायीं ओर की मूर्ति में है। छत्र तथा चंवर लिए उसके पीछे दो अनुचर स्त्रियां है। नंगे असुर के शरीर पर से गुजरते हुए इस रथ के पहिए को दिखाया गया है।

रथों का अंकन प्राचीन मृण्मूर्तियों में भी मिलता है। एक शुंग कालीन मृण्मूर्ति में चार घोड़ों द्वारा खीचे जाने वाले सारथी युक्त रथ पर एक योद्धा को बाण चलाते हुए दिखाया गया है। बाणों से भरा हुआ तरकस उस योद्धा के पीछे बंधा हुआ है। चार घोड़ों की लगाम पकड़े हुए ठीक उनके समीप ही उसका सारथी है।(15) शुंगकालीन रथ जिसे दो घोड़े खींच रहे हैं और उनकी गर्दन पर घोड़ों की लगाम है। बढौदा संग्रहालय में यह सुरक्षित है।(16)

International Journal in Commerce, IT and Social Sciences
Volume 10 Issue 03, March 2023 ISSN: 2394-5702 Impact Factor: 6.617
Journal Homepage: http://ijmr.net.in, Email: irjmss@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal

रथ का अंकन कुछ प्राचीन मुहरों में भी हुआ है। घोड़ों द्वारा खींचे जाते हुए रथ का अकन, झूंसी से प्राप्त प्रथम शताब्दी ई० पू० कालीन दिखाया गया है। चार फलकों वाली एक मुहर कौशाम्बी से प्राप्त हुई है, एक ही प्रकार के दृश्य का अंकन इसके चारों फलकों पर है।(17) इस मुहर में दो पहिए वाला एक रथ एकदम दाहिनी तरफ है, जिसमें दो अश्व जुते हुए हैं तथा लम्बा चाबुक लिए हुए एक सारथी उस पर बैठा हुआ है।

सारथी-

प्राचीन काल से ही प्रायः दो व्यक्ति ही रथों पर सवार होते थे। कभी कभी एक रथ में आठ व्यक्तियों के भी बैठने का उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है। सूत तथा रथिन् शब्द से सारथी को सम्बोधित भी किया गया है। महाभाष्य में तीन शब्दों से सारथी, सूत एवं प्रजिता रथ होंकने वाले को सम्बोधित किया गया है। सारथी रथ में बाईं तरफ बैठता था ऐसा उल्लेख महाभाष्य में मिलता है। अतः वह सव्येष्टा भी कहलाता था।(18) सारथी के लिए महाभारत में स्त्रोत तथा सारथी शब्द आया है। रथ में योद्धाओ की सख्या में भी वृद्धि बाद के कालों में हुई। दो योद्धा रथ में सारथी के अतिरिक्त बैठते थे।(19) मेगस्थनीज बताता है कि एक रथी और सारथी होता था। जबकि कर्टियस के अनुसार छः व्यक्ति भारतीय रथों में होते थे जिनमें दो रथी धनुष बाण लिए हुए, दो रथी ढाल लिए हुए तथा अन्य शेष दो सारथी शस्त्रों से सुसज्जित होते थे। पोरस की सेना में छः व्यक्ति पर सवार होते थे जिनमें दो सारथी घोडों को हौंकते थे। रथी सारथी के मारे जाने पर स्वय सारथी बन जाते थे।(20)

इस प्रकार रथ में प्रयुक्त घोड़ों की संख्या पर सारथी की संख्या मुख्य रूप से आधारित होती थी। यदि दो घोड़े रथ में जुते रहते थे तो एक सारथी ही उपयुक्त होता था। तीन सारथियों का विधान रथ में चार घोड़ों से युक्त होने पर था। मध्य के दो घोड़ों को मुख्य सारथी बीच में बैठ कर हौंकता था। दो अन्य सारथी उसके अगल बगल बैठते थे। जो किनारे के एक-एक घोडे को हाँकते थे।

सारथी की योग्यता का भी उल्लेख प्राचीन ग्रन्थों में मिलता है। कौटिल्य सारथी की योग्यता के विषय में बताया है कि सारथी को रथ बनाने वाला तथा घोड़ों के विषय में जानकारी रखने वाला होना चाहिए। शुक्रनीति के अनुसार जो अश्वाधिपति के गुणों से युक्त होता हुआ भार वहन करने में समर्थ, रथ में जोते जाने वाले घोड़ों को एव रथ को दृढ़ता के साथ चलाना, घुमाना व बदलना जानता है और रथ की विशेष गति से शत्रुओं के द्वारा चलाए हुए शस्त्रास्त्रों को विफल बनाने वाला तथा शत्रुओ के साथ मुठभेड़ होने पर अपने घोड़ों को बचाने की कला जानने वाला हो, उसे सारथी बनना चाहिए। योद्धा की सफलता के लिए सारथी का दक्ष होना अत्यधिक आवश्यक था। भू-क्षेत्र की बनावट

का देश विदेश के भूगोल का, अपने रथी योद्धा के बल का घोड़ों की कार्य क्षमता व भूख-प्यास का सभी प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का तथा पशु पक्षियों की बोली का ज्ञान सारथी को होना चाहिए।

रथों का विशेष महत्व आरम्भिक काल से लेकर मौर्य काल तक बना रहा। अष्टाध्यायी, अर्थशास्त्र आदि ग्रथों तथा प्राचीन शिल्प के अकनों से ज्ञात होता है कि मौर्य काल तक रथ निर्माण में पर्याप्त उन्नति हो चुकी थी। इन रथों को प्रायः दो से चार घोडों द्वारा खींचने का उल्लेख अर्थशास्त्र में मिलता है। रथों को व्याघ्र, गैंडा आदि के चर्म एवं लोहे की परत से कवचित कर दिया जाता था। रथारोही सैनिकों का प्रमुख शस्त्रास्त्र धनुष-बाण था, किन्तु आवश्यकतानुसार ये सैनिक माला कटार, तलवार, गदा आदि भी धारण करते थे। मौर्य काल के बाद सेना की संख्या तथा उपयोगिता में क्रमशः द्वारा होने लगा। गुप्त-काल तक पहुँचते-पहुँचते घुड़सवार सेना के अधिक प्रचलन के कारण सेना में रथों का उपयोग बहुत कम होने लगा।

सन्दर्भ

1. बेणी माधव बरुआ, भरहुत चित्र [52], पटना, 1989, पृ० 134

2 जगदीश चंद्र जैन, जैन आगम साहित्य में समाज, वाराणसी, 1965, पृ० 95-96

3 जे०एम० रोजन फील्ड, डायनेस्टिक आर्ट ऑफ द कुषाणाज, बैंकले, 1967, पृ० 28

4. ए० कर्निंघम, स्तूप आफ भरहुत, फलक [13], वाराणसी, 1962 ई० पृ० 3

5 जगदीश चंद्र जैन, पूर्वोक्त पृ० 95

6 जोगेश चंद्र सिकवार, स्टडीज इन द भगवती सूत्र, मुजफ्फरपुर, 1964, पृ० 119

7 मैक्रिडल, इंडिया एंड इट्स इंवेंजन वाई अलेक्जेंडर, लंदन, 1969, पृ०102

8 पूर्वोक्त पृ० 275

9 पी०सी० चक्रवर्ती, द आर्ट ऑफ वार इन एंसिएंट इंडिया, ढाका, पृ० 25

10 जे०एम० रोजन फील्ड, पूर्वोक्त, पृ० 27

11 बी०के० मजूमदार, मिलिट्री सिस्टम इन एंसिएंट इंडिया, कलकत्ता, 1955, पृ०38

12 पूर्वोक्त, पृ० 40

13 पी०सी० चक्रवर्ती, पूर्वोक्त, पृ० 161

14 वासुदेव शरण अग्रवाल, भारतीय कला, वाराणसी, 1966 ई., पृ० 166

15 आई०ए०ए०आर०, 1954-55 फलक, 32

16 एम०के० धवलिकर, मथुरा आर्ट इन बडौदा म्यूजियम, फलक [7] चित्र [20] पृ० 16

17 आर०सी०टंडन, ए कोमेमोरेटिव शुंग सीलिंग फ्रॉम कौशाम्बी, जे०एन०एस०आई०, जिल्द 33, भाग 1, 1971 ई०, पृ० 29-32

18 प्रभुदयाल अग्निहोत्री, पंतजलि कालीन भारत, दिल्ली, 1965 ई०, पृ० 232

19 आर०सी० मजूमदार, द क्लासिकल अकाउंट आफ द इंडिया, कलकत्ता, 1960 पृ० 421

20 राधा कुमुद मुखर्जी, चन्द्रगुप्त मौर्य एंड हिज टाइम्स, दिल्ली 1962 ई०,पृ० 175